• कविताएं...

ओस के दिये...

पलकों की देहरी पर किसी ने
रख दिये ओस के दिये
पुतलियो के दरवाजे खुले
मनुहार के जुगनू झिलमिलाये
पलकों की देहरी पर किसी ने
रख दिये ओस के मोती
पुतलियों के दरवाजे खुले
सुधियों के हंस लहराये
पलकों की देहरी पर किसी ने
रख दी ओस की मंजरियां
पुतलियों के दरवाजें खुले
प्रीत के बसंत घिर आये
पलकों की देहरी पर किसी ने
छेड़ दी ओस की रागिनी
पुतलियों के दरवाजे खुले
उमंगों के पपीहे बौराये

■ राजश्री

एक प्रश्न...

एकलव्य !
हम यह नहीं कहते
कि बांट पाएंगे
तुम्हारा दुख।
तुम्हारे अन्तर्द्वन्द्व
को समझने का भी
हम दावा भी नहीं करते

इसलिए
पूछना चाहते हैं तुम्हीं से –
कितनी पीड़ा हुई थी
कितना लहुलुहान
हुआ था हृदय?
लोग कहते हैं
तुमने हंसते-हंसते
काट दिया था
अपना अंगूठा
सच बताना
क्या तुम्हारी अंगूठाविहीन हंसी
सचमुच निर्मल थी?

■ विश्वासी एक्का

• कहानी/उमाशंकर जोशी

मड़ई

गतांक से आगे...

बड़े भैया ने फटाफट कागज तैयार किया और मकनासी की इच्छानुसार हिसाब चुकता कर लिया। बोले, 'लड़का अगर अच्छा काम करेगा तो इनाम देकर तुम्हें खुश करेंगे। कपड़ों में तो एक कुर्ता, एक धोती, एक गमछा, लट्ठे का फेटा और कोरा की चादर इतना ही न। बरसात बीतते ही अडपोदरा के जूते मंगवा देंगे। बस हो गया पूरा।'

फिर तो उस दिन भाभी ने मुझसे बहुत सारे चक्कर कटवाये। कभी बाहर से कंडेले आने को कहतीं तो कभी पास के घर से छाछ मांग लाने को कहतीं, और फिर जाने लगता तो कहतीं, 'बैठ बचू को झूला झुला, मैं ही ले आती हूं।' मुझे पूरे समय लगता रहा कि गोवा मेरी गतिविधियों पर नजर रख रहा था। कंडे लेने गया तब तो उसने मेरी मदद भी की और सूखे-सूखे निकाल दिये। बड़े भैया ने मकनासी से ढीले पड़े हुए पशु बांधने के खूंटों को फिर से मजबूत गढ़वा लिये और यूं ही पड़ी हुई लकड़ी के दो गट्ठों को कटवा लिया। दोपहर में जब भाभी का दुर्गा स्कूल से आया तो भाभी ने उसे और मुझे रसोई से बुलाकर खाने के लिए और यूं ही पड़ी हुई लकड़ी के दो गट्ठों को कटवा लिया। दोपहर में जब भाभी का दुर्गा स्कूल से आया तो भाभी ने उसे और मुझे रसोई में बुलाकर खाने के लिए बैठा दिया। मकनासी और गोवा को बर्दवान में बैठाया। यह देखकर मुझे आश्चर्य हुआ कि कल मेहमान आये थे तो भी मिठाई नहीं बनी थी और आज इन लोगों के स्वागत हेतु भाभी ने कंसार बनाया है। बर्दवान में जाकर दूसरी बार कंसार परस कर आती हुई भाभी ने कहा, 'मकना काका, तुम्हारा बेटा घर पर ही है, यही समझना। मेरा शामल है, ऐसा ही गोवा को न समझूं तो भगवान मुझसे पूछेगा।'

शाम ढलने पर गद्गद आवाज से भाई भाभी को जै गोपाल करके मकनासी घर लौट गये। कुछ दूर तक पहुंचाकर गोवा घर आया। छुट्टियां खत्म होने में कुछ दिन बाकी थे, तब तक के लिए गोवा को कुआं-खेत आदि दिखाने का काम बड़े भैया ने मुझे सौंपा। खेत की बाड़ में कहीं खंझ पड़ी हो, तो उन्हें भी ठीक करवा लेना था। उनके हलवाहों के साथ इसे भी मिलाकर, सबके साथ हुक्के पानी की निकटता जोड़ देनी थी।

'गोविन्दा।'

वह चौंका

'मुझसे कहा?' हम खेत की बाड़ के सहारे-सहारे घूम रहे थे। 'यह ठाकुरों जैसा नाम कहां से ले आये भैया?' घर में तो फिर उस नाम का इस्तेमाल करने लगा था और उस नाम से पुकारने पर उसे गर्व का अनुभव होता था। वह मुझे अपने से बहुत बड़ा लगता।

'तो गोविन्दा यह सारी सूखी जमीन तू हरी कच्च कर देगा?'

'बरसात के दिन आने तो दो, तब इसका पता चलेगा। यह तो क्या, पर हमारे यहां तो इस पूरे कुएं के खेत से भी बड़ा, अकेला बाजरे का खेत है। कितने ही लोग रात-दिन एक करते हैं, तब जाके कहीं कटता है।'

'तो, तो काफी अनाज होता होगा। इतनी खेती है, फिर भी तेरे पिता ने तुझे पढ़ने के लिये क्यों नहीं बैठाया?'

'फसल में तो कितनों के हिस्से भी तो होते हैं न। और फिर हमारा तो सारा का सारा खलिहान से ही बनिया उठा ले जाता है। पिताजी कहते हैं कि अनाज के ढेर से कहीं अधिक बड़ा कर्ज का ढेर है।'

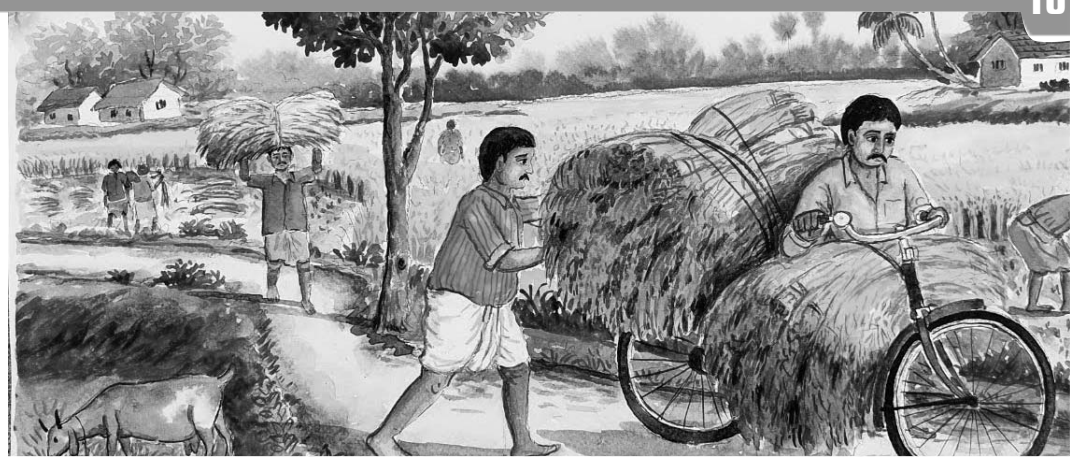

उसे बुरा न लगे इस तरह मैंने हां, हां करते हुए आधा हां में और आधा हंसते हुए सब समेट लिया। गोविन्दा मानों अपने मन में ही बात कर रहा हो, 'और पिताजी भी कह रहे थे न, कि हम तो भले ही काला अक्षर भैंस बराबर हों, फिर भी बच्चे अफसरी करने लायक हो जाएं।'

छुट्टियां खत्म होने पर मैं तहसील के स्कूल में पढ़ने चला गया। मुझे वहां छोड़कर मेरे घोड़े को वापस लाने का काम बड़े भैया ने गोविन्दा को सौंपा था...

'पर पढ़ो लिखो तो कर्ज तो दस दिन में चुका दिया जा सकता है।'

'सच बात है।' उसने चौंककर मेरी ओर देखा।

'हां, पांच-सात साल में मैं बम्बई यूनिवर्सिटी का ग्रेजुएट हो जाऊंगा तो मुझे अपने यहां कैसी नौकरी मिलेगी, तुझे पता है? और फिर एल-एल-बी। अथवा बैरिस्टर हो जाऊं तो खुद आकर राजा मुझे दिवान न बना ले तो बात हुई।' उस समय बड़े भैया द्वारा दिमाग में घुसाई गई महत्वाकांक्षाओं को व्यक्त करने का मौका अनुभव करता हुआ मैं बोले जा रहा था। गोविन्दा ताकता ही रह गया। उसका चेहरा किसी प्रौढ़ आदमी के चेहरे की भांति गम्भीर और चिन्तातुर लग रहा था।

'शामल भाई! तब तो मेरा भाई बलिस्टर नहीं बन सकता?'

मैं खिलखिलाकर हंस पड़ा, वह सब कुछ गम्भीरता से कह रहा था, इसमें कोई शक नहीं था। गोविन्दा ने बात आगे बढ़ाई-

'इसमें हंसने की क्या बात है? तुम्हारे बाप-दादे कहां पढ़े-लिखे थे? तुम्हारे भैया तुम्हें पढ़ा रहे हैं न। फिर इसी तरह हमारा हौसला भी बढ़ेगा।'

उसने मुझे खिसियाना-सा कर दिया। पर तुरन्त ही उसने मुझे मना लिया।

'हां, शामलभाई, आप दीवान बनेंगे तो आपके हाथ के नीचे आदमी की जरूरत पड़ेगी ना।'

उसे बुरा न लगे इस तरह मैंने हां, हां करते हुए आधा हां में और आधा हंसते हुए सब समेट लिया। गोविन्दा मानों अपने मन में ही बात कर रहा हो, 'और पिताजी भी कह रहे थे न, कि हम तो भले ही काला अक्षर भैंस बराबर हों, फिर भी बच्चे अफसरी करने लायक हो जाएं।'

छुट्टियां खत्म होने पर मैं तहसील के स्कूल में पढ़ने चला गया। मुझे वहां छोड़कर मेरे घोड़े को वापस लाने का काम बड़े भैया ने गोविन्दा को सौंपा था। रास्ते भर गोविन्दा घोड़े के साथ-साथ तेज कदम मिलाता हुआ चल रहा था और हांफता-हांफता बीच-बीच में कुछ पूछ रहा था।

'तुम दीवाली पर आओ, तब मेरे भाई को पढ़ाना है, हां।'

'तुम नवरात्रि में नहीं आओगे? ताजा भुट्टे खाने को नहीं मिलेंगे दीवाली पर तो?'

पहुंचने के बाद सब विद्यार्थियों के सामने तो ज्यादा पूछा नहीं पर उन सबकी तरफ वह अलग ही दृष्टि से देखे जा रहा था। मानो प्रत्येक विद्यार्थी में उसे उसका हाथीड़ा दिखाई दे रहा हो।

फिर वापस दशहरे के समय वह ताजा भुट्टे लेकर आया तो अमुक दो-तीन छोटे लड़कों को उसमें से देने के कलए कहा भी और फिर मुझे बुलाकर धीरे से पूछा,

'इनमें से पढ़ने वाला कोई किसानों का बेटा है?'

'कुछेक ही। नहीं तो सबके घर से बहुत सारे भुट्टे नहीं आए होंगे यहां?'

'तुम्हारी तरह किसी के नहीं आते?'

'नहीं रे। क्या यह समझता है कि बड़े भैया हर साल भुट्टे भेजते थे?'

'मैंने पूछा तब बड़े भैया ने कहा कि ले जा, पर उनकी पत्नी?'

'कोई बात नहीं, वो तो सब चलता है। पर मुझे बता तो सही, ये भुट्टे तूने अपने ही हाथों से उगाए हैं?'

'तो किसके हाथ से? ये सर्दियां उतरी नहीं कि गेहूं का खलिहान तैयार समझो। पर अब होला देने नहीं आऊंगा। मुझे तुम्हारे बड़े भैया की पत्नी डांटती हैं।'

'कोई डांटेगा नहीं।'

वह वापस घर जाने के लिए निकला तो मैं रास्ते तक उसके साथ गया। कुछ दूर पहुंचने के बाद उसने देख लिया कि कोई सुन तो नहीं रहा है और मेरे कान के पास मुंह लाकर खड़ा हो गया। पर बात इतनी महत्व की थी कि बोलने में भी उसे विश्वास नहीं था।

'हाथीड़ा काम पर लग गया है, हां। कभी का, इन पन्द्रह दिनों से।' वह चिल्लाकर बोला और तुरन्त रास्ते पर दौड़ने लगा। मैंने उसे हाथ का इशारा करके और आवाज देकर रुक जाने के लिये कहा, अब मेरी समझ में आता है कि वह रुक सके ऐसी स्थिति में नहीं था। वह मेरी और दूसरे विद्यार्थियों की स्थिति देखने के बाद ऐसा बोलने में शरमा रहा था। उसकी दृष्टि में इस खबर को सुनाना एक बड़ी-समाचार पत्रों में आने वाली किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय विस्फोट की खबर से भी बड़ी घटना थी।

वह थोड़ी-थोड़ी देर में मुड़कर देख रहा था। और दौड़ रहा था। मैंने आवाज दी और रूमाल हिलाया।

'हां, हां, मुखिया के बेटे के पास पढ़ता है।'

उसने पता नहीं किसका जवाब दिया। मैंने उसे रोकने के लिए फिर से रूमाल हिलाया।

'हां, हां, तुम आओगे तब स्कूल में भर्ती करवायेंगे।' उसने फिर किसी अनपूछे प्रश्न का उत्तर दिया और रास्ते के मोड़ के पीछे की ओर अदृश्य हो गया। आंखें पोंछता-पोंछता मैं वापस आया और अपनी तथा अन्य विद्यार्थियों की ओर एक दूसरी ही नजर से देखने लगा। मेरे सामने अनेक प्रश्न तैरने लगे। गोविन्दा को क्यों पढ़ने का मौका नहीं मिला? वह अनाज पैदा करता है और हम सब मौज करते हैं। ऐसे लोग मजदूरी करते हैं तभी तो हम पढ़ सकते हैं। वह क्यों मजदूरी करता है? न करे। उसे गरज है इसलिए करता है, उसका हित उसी में होगा। इस प्रकार के अनेक उल्टे-सीधे विचार दिमाग में उथल-पुथल मचा गए। इस घटना के बाद मुझे स्कूल के विद्यार्थियों के प्रति एक प्रकार की नफरत-सी होने लगी थी।

-जारी

• शायरी...

आदमी की अजब-सी हालत है।
वहशियों में ग़ज़ब की ताक़त है॥
चन्द नंगों ने लूट ली महफ़िल,
और सकते में आज बहुमत है।

◆◆◆

अब किसे इस चमन की चिन्ता है,
अब किसे सोचने की फुरसत है?
जिनके पैरों तले ज़मीन नहीं,
उनके सिर पर उसूल की छत है।
रेशमी शब्दजाल का पर्याय,
हर समय, हर जगह सियासत है।
वक्त के डाकिये के हाथों में,
फिर नए इंक़लाब का ख़त है।

-शेरजंग गर्ग

◆◆◆

किसी ख़याल का कोई वजूद हो शायद
बदल रहा हूं मैं ख्वाबों को तजरबा कर के
कभी न फ़ैसला जल्दी में कीजिए 'साहिल'
बदल भी सकता है काफ़िर वो बद-दुआ कर के

-ख़ालिद मलिक 'साहिल

• एक दिन...

एक दिन
लोगों के स्वाभिमान को
कुचल कर
अपने पैरों तले जो
पिरामिड बनाया तुमने
किसी दिन उसी
की सीढ़ी बना
दुःख तुम तक पहुंच जाएगा
और तुम्हारे कद से ऊंचा
हो जाएगा।

–वंदना मिश्रा